ARYAVART SHODH VIKASH PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 194-196
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-8, No.-II, Issues-IX YEAR- Dec-2017

अथर्ववेद में मनोचिकित्सा की वैज्ञानिक अवधारणा

डॉ0 विनोद कुमार पाण्डेय
एसोसिएट प्रोफेसर– संस्कृत विभाग, के0जी0के0, पी0जी0 कॉलेज, मुरादाबाद (उ0प्र0) भारत

"वेदोऽखिलो धर्ममूलम्" यह प्रशंसा परक सूक्ति सर्व विदित है। समग्र विश्व साहित्य के प्राङ्गण में सम्पूर्ण धर्मों का मूल वेदों को कहा गया है। परमार्थ पुरुषार्थचतुष्टय प्राप्ति में वेदों की अपनी विशेष महत्ता है। वेद सब कुछ देने में समर्थ है। समस्त वेदों का विशिष्टतम स्थान है परन्तु अथर्ववेद एक पूर्ण रूपेण चिकित्सा विज्ञान का परमभूत ग्रन्थ है। इसमें वैज्ञानिक रीति से शरीर तथा मन को स्वस्थ रखने की पूर्ण कला सन्निहित है। औषधियां भी यहां निर्दिष्ट की गयी है। सूर्य चिकित्सा, जल चिकित्सा, वायु चिकित्सा, स्पर्श चिकित्सा आदि का विस्तृत पूर्वक वर्णन प्राप्त होता है। शरीर में समस्त इन्द्रियों के साथ मन भी एक इन्द्रिय रूप में निहित रहता है।

अथर्ववेद ऐहिक तथा पारलौकिक ज्ञान प्रदान करता है। मानव जीवन को कष्ट तथा दुःखों से निवृत्ति हेतु अथर्ववेद मार्ग निर्देशन करता है। अथर्ववेद शारीरिक तथा मानसिक दोनों प्रकार के रोगों के कारण–निवारण पर विस्तारपूर्वक वर्णन करता है। शरीर में होने वाले कष्ट रोग शारीरिक रोग कहलाते हैं। अन्न इत्यादि के खानपान, रहन–सहन के कारण उत्पन्न काम, क्रोध, ईर्ष्या द्वेष आदि के विकारो से उत्पन्न रोग मानसिक रोग कहे जाते हैं। **रजस्तमश्च मानसौ दोषौ**[1] शरीर सभी रोगों का आधार है। इसी कारण से कष्ट प्राप्त होता है, किन्तु मानस रोगों का मुख्य आश्रय मन नही है, क्योंकि पीडा मन को ही होती है। आजकल भी शरीर तो स्वस्थ रख सकते हैं परन्तु मन किसी का पूर्णरूपेण स्वस्थ नहीं है। कठोपनिषद् में मन को लगाम निर्दिष्ट किया गया है–

"आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु। बुद्धिं तु सारथिं विद्धि, मनः प्रग्रहमेव च।।[2]

अर्थात् इस जीवात्मा को तुम रथी, रथ का स्वामी समझो और शरीर को ही उसका रथ समझो तथा बुद्धि को सारथी (रथ हांकने वाला) और मन को लगाम समझो।

आहार शुद्धौ सत्वशुद्धिः। अर्थात् "जैसा खाए अन्न वैसा रहे मन"। इस लोकोक्ति से आहार शुद्धि प्रमाणित है। मन की प्रसन्नता और स्वास्थ्य मनुष्य को निरोग रखता है और दूषित होना रोग का ही कारण है। पुरुष सूक्त में पुरुष के मन से चन्द्रमा की उत्पत्ति बताई **"चन्द्रमा मनसो जातः।"**[3] गयी है अर्थात चन्द्रमा की उत्पत्ति मन से होती है। मन की कोमलता, शीतलता, सुन्दरता को ध्यान में रखकर निर्देश प्राप्त होता है। अर्थात् जिस प्रकार चन्द्रमा आनन्द दायक है उसी प्रकार यह मन भी सभी इन्द्रियों के सहयोग से हमें आनन्दित करने वाला है। महर्षि चरक तथा सुश्रुत के अनुसार दो प्रकार का मनोरोग होता है। अपस्मार तथा उन्माद। मनोरोगों में तन्द्रा मूर्च्छा, संज्ञानाश, ईर्ष्या इत्यादि भी माना जा सकता है। परन्तु इन सभी का समावेश इन्हीं दोनों मे हो जाता है। संस्कृत वाङ्मय में विभिन्न तथ्यों से ज्ञात होता है। अथर्ववेद में भी अपस्कर,उन्माद दो प्रकार के मनोरोग का वर्णन प्राप्त होता है।

देवेन सादुन्मदिनमुन्यतं रक्षसस्परि। कृणोमि विद्वानभेषजं यदानुन्मदितोऽसति।।[4]

अर्थात् विद्वानों के लिए पाप से उन्मत्त अथवा राक्षस जीव से उन्मत्त पुरुष के लिए विद्वान् मैं औषध करता हूं। जिससे वह उन्मादरहित हो जावे। चिकित्सा शास्त्र में ऋषियों द्वारा स्मरण शक्ति के नाश होने का नाम अपस्मार बताया गया है।

स्मृतेरपगमं प्राहुरपस्मारं भिषग्विदः। यत् प्रवेशः वीभत्सचेष्टश्रीसत्व सम्प्लवात्।।[5]

इस रोग में मन के विकृत होने पर नेत्रों के सामने अन्धकार सा दिखाई देना, शरीर में कम्प, मुख से फेन का निकलना आदि वीभत्स चेष्टाएं रोगी करता है। कभी–कभी मन अत्यधिक भय और हर्ष से युक्त हो जाता है। क्रोध, लोभ, तथा प्रिय का वियोग से संतप्त हो उठता है। तभी उन्माद रोग उत्पन्न होता है।

अतः बुद्धि स्मृति भ्रमित हो जाता है। अथर्ववेद में औषधीय विधियों का भी वर्णन मिलता है। ऐसे रोगों की चिकित्सा के लिए अथर्ववेद में न्यस्तिका का उपयोग पर बल दिया गया है। इसे ही शंखपुष्पी कहा जाता है। अतः इसके उपयोग से उन्मत्तता से मन शान्त तथा स्थिर होकर बलवान हो जाता है।

न्यस्तिका रुरोहिथ शुभगंकरणी मम।[6]

अर्थात् नित्यप्रकाशमान तथा मेरी सुन्दर ऐश्वर्य करने वाली तू प्रकट हुई है। अथर्ववेद के ही दूसरे मन्त्र में मानसिक उन्माद रोग अग्नि चिकित्सा का वर्णन प्राप्त होता है। उस मन्त्र का कथन है अग्नि में सुगन्धित लकड़ी, कपूर, चन्दन, केसर,

अनुरूपी लेखक

तुलसी गूगल आदि पदार्थ तथा छुआरे किशमिश पौष्टिक मेवे से रोग नष्ट होते हैं। गिलोय के धुएं से विभिन्न बीमारियां नष्ट होती हैं, ऐसा करने से मन और चेतना शक्तिशाली तथा समर्थवान् बनते हैं।

कृणोमि विद्वान् भेषजं यथानुन्मदितोऽस्मि।।[7]

मनोरोगों को ठीक करने हेतु विभिन्न विधियों का वेदों में विस्तार पूर्वक वर्णन है। भय विस्थापन चिकित्सा की विधि से रोगी व्यक्ति को भय दिखलाया जाता है। जिसके कारण रोगी की स्मरण शक्ति पुनः वापस होती है। इन रोगों से पीड़ित तथा रोगी व्यक्ति का मनोबल का ह्रास हो जाता है। अथर्ववेद में संकल्प चिकित्सा तथा आश्वासन चिकित्सा आदि का वर्णन प्राप्त होता है।

सोऽरिष्टन मरिष्यसि न मरिष्यसि मा विभः। न वै तत्र म्रियन्ते नो यन्त्य तमः।।[8]

अर्थात् हे निर्हानि! तू नहीं मरेगा। तू नहीं मरेगा। भय मत कर! वहां पर कोई भी नहीं मरते हैं। और न ही अन्धकार के नीचे जाते हैं। अर्थात जहां पर ब्रह्म का विचार है वहॉ मृत्यु का भय नहीं होता।अश्वासन चिकित्सा किसी कुशल वैद्य द्वारा रोगी के मनोबल के सम्बर्धन का विस्तृत वर्णन मिलता है। इसी विधि से रोगी के मनोबल से सम्बन्धित होता है ऐसा 4करने से मनोबल में स्फूर्ति बढ़ती है बल बढ़ता है इसी से रोग रोगाणुओं का विनाश होता है।

वातात् ते प्राणमविदं सूर्याच्चक्षुरहं तव। स वित्स्वाङ्गैर्वद जिह्वयालयन्।।[9]

अर्थात् जैसे वायु और सूर्य से दृष्टि स्थिर रहती है। वैसे ही मनुष्य आत्मा के मन को निश्चल करके पदार्थों के तत्त्व को साक्षात् करके सारांश का उपदेश करे।

पाश्चात्य जगत में अत्यधिक महत्व आश्वासन चिकित्सा विधि द्वारा दिया जाता है। वैदिक काल से इस विधि द्वारा रोग ठीक किए जाते हैं। ऋषियों मुनियों के अनुसार मन मस्तिष्क अमृत से पूर्ण होता है। परन्तु मन को आजकल कुविचारों से भरा हुआ है। महर्षि याज्ञवल्क्य ने मन को देवता माना है। मनुष्यों की यही ज्योति है। यजुर्वेद में मन की शान्ति के लिए 6 मन्त्र समागत हैं।

यज्जागतो दूरमुदैति दैवं, तदु सुप्तस्य तथैवेति। दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं, तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु।।[10]

वह मेरा मन कल्याणकारी धर्मविषयक सङ्कल्प वाला हो। अर्थात् वह कभी पाप में गतिशीन न हो। जो मन जागते हुए पुरुष के चक्षुरादि की अपेक्षा दूरगामी है तथा विज्ञानात्मा में उत्पन्न है। और जो मन सोते हुए व्यक्ति का भी दूर दूर तक जाने वाला है। तथा जो मन अतीत अनागत वर्तमान त्रिप्रकृष्ट तथा व्यवहित पदार्थों का भी ग्राहक है। तथा जो प्रकाशक कर्णादि इन्दियों का भी प्रवर्तक है।

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः। यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां, तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु।।[11]

कर्मयुक्त तथा बुद्धियुक्त मेधावी जन जिस मन के द्वारा यज्ञों में हविशदि पदार्थों के ज्ञान होने पर कर्मों को करते हैं तथा जो मन इन्द्रियों से पूर्ण सृष्ट हैं तथा मनन करने में समर्थ हैं। तथा प्राणिमात्र के शरीर मध्य में अन्तरिन्द्रिय होकर स्थित है। वह मेरा मन शुभ संकल्प वाला बने।

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्जोतिरन्तरमृतं प्रजासु। यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु।।[12]

जो मन विशेष ज्ञानजनक है। सम्यक् ज्ञापक और धैर्यरूप है। जो मन प्रजाओं के साथ मध्य वर्तमान होकर सर्वेन्द्रियों का प्रकाशक है। और आत्मरूप होने से अमरण धर्मी है। तथा जिस मन के विना कोई भी कार्य नहीं किया जा सकता। मेरा वही मन शुभसङ्कल्पों से युक्त हो।

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम्। येन यज्ञस्तायते सप्तहोता, तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु।।[13]

जिस मन के द्वारा भूतकाल से सम्बद्ध वस्तु वर्तमान काल से सम्बद्ध वस्तु तथा भविष्यत् काल से सम्बद्ध अर्थात् तीनों काल से सम्बद्ध वस्तुओं का सर्वतः ज्ञान होता है तथा मुक्ति पर्यन्त अनश्वर जिस मन के द्वारा सप्त होता वाले अग्निष्टोमादि यज्ञों का विस्तार होता है। वही भद्र सङ्कल्प युक्त हो।

यस्मिनृचः साम यजूषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवारा। यस्मिन् चित्तं सर्वमोतं प्रज्ञानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु।।[14]

जिस मन में ऋचाएं, जिसमें साम मन्त्र प्रतिष्ठित है तथा जिसमें यजुष् मन्त्र प्रतिष्ठित है जैसे कि रथचक्र की नाभि के मध्य अरे लगे होते हैं तथा जिस मन के प्रज्ञाओं का सर्वपदार्थ विषयी शान पट में तन्तु वत् विक्षिप्त है वह हमारा मन सत्सङ्कल्प वाला हो।

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव। हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं, तन्मे मनः

शिवसङ्कल्पमस्तु।।[16]

जो मन प्राणिमात्र को अत्यर्थ इधर उधर ले जाता है। जैसे शोभन सारथि अश्वों को कशा द्वारा इधर उधर ले जाता है। तथा जैसे सुसारथि लगाम द्वारा अश्व को नियंन्त्रण में रखता है वह हृदयस्थ, सदा जरा से रहित तथा अति वेगवान् मेरा मन शोभन सङ्कल्पों से युक्त हो। शान्तचित्त तथा पवित्र मन आजकल पाप, क्रोध, ईर्ष्या, मोह आदि विकारों से ग्रसित होकर मानव मनोरोगी बन गया है। मनोरोग के विचारार्थ अथर्ववेद में मनोरोगों को दूर करने की विभिन्न विधियां निर्दिष्ट की गयी हैं। मन एक प्रकृष्ट ज्ञान का केन्द्र हैं। जिस पर नियन्त्रण प्राप्त कर अपने आपको रोगी होने से बचा सकते हैं जिससे हमारा जीवन सुखमय बन सके। मानव का सम्पूर्ण कार्यों का सम्पादन मन से ही होता है। समग्र इन्द्रियां इसी से नियन्त्रित होती हैं प्रायः इसी लिए कहा जाता है कि "मन एवं मनुष्याणां कारणं वन्धमोक्षयो।"अर्थात् मन नही मनुष्यों को बन्धन और मोक्ष का कारण है। अतः मन का पूर्णतया स्वस्थ रहना परमावश्यक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. चरकसंहिता– 6.5.
2. कठोपनिषद् – 1–3.3.
3. ऋग्वेद – 10–90.3.
4. अथर्ववेद– 6.111.3.
5. चरकसहिता– विज्ञान स्थान– 107.
6. अथर्ववेद– 6.139.15.
7. अथर्ववेद– 6.111.3.
8. अथर्ववेद– 8.2.24.
9. अथर्ववेद– 8.2.3.
10. यजुर्वेद– 34.1.
11. यजुर्वेद– 34.2.
12. यजुर्वेद– 34.3.
13. यजुर्वेद– 34.4.
14. यजुर्वेद– 34.5.
15. यजुर्वेद– 36.6.

*****